अध्याय - 1

सारंगढ़ रियासत का सामान्य परिचय

1 नवंबर सन् 2000 ई. को भारतीय संघ के 26 वें राज्य के रूप में नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य अंतर्गत रायगढ जिले के सारंगढ़ तहसील का क्षेत्र सन्1947 तक सारंगढ़ रियासत के नाम से एक ईकाई के रूप में रहा है। भारत की देशी रियासतों में सारंगढ़ रियासत अपेक्षाकृत छोटी रियासत होने के बावजूद भौगोलिक राजनैतिक ,सांस्कृतिक , पुरातात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है। यही कारण है , कि छत्तीसगढ राज्य का जनमानस सदैव सारंगढ़ के इतिहास को जानने के लिये आकुल - व्याकुल रहा है।

1.1 नामकरण :

सारंगढ़ रियासत के नामकरण का प्रश्न अत्यंत गूढ़ है, किन्तु पर्वतीय क्षेत्र होने के कारण यहां प्रायः पहाड़ी किलो का अस्तित्व रहा होगा। सारंगढ़ रियासत में कई स्थानों पर खाईयो से घिरे हुये मिट्टी के किले प्राप्त होते हैं, जिनके बारे में कहा जाता है, कि इन्हे भैना राजाओं ने बनवाया था, जो गोड़ राजवंश की स्थापना के पूर्व यहां शासक थे।[1]

सारंगढ़ नाम का अर्थ है बांस का किला सारंग का अर्थ बांस और गढ़ का किला है।[2] हालांकि सारंग के अनेक अर्थ है। यहां पर कोई-कोई इसका अर्थ बांस भी कहते है, पहिले यहां बांस का घना जंगल रहा होगा, इसी के ऊपर इसका नाम पड़ा है।[3]

सारंगढ़ रियासत का नामकरण सारंगढ़, बांस की अधीकता के कारण अर्थात् वनस्पति के आधार पर रही है, इस प्रकार सारंगढ़ रियासत का नामकरण घटना प्रधान न होकर प्रकृति प्रधान रही है।[4]

छत्तीसगढ़ तथा पार्श्ववर्ती क्षेत्रों में गढ़ शब्द का अर्थ व्यापक रूप में किला ही नहीं होता। रतनपुर के हैहयवंशी शासकों के अधीन गढ़ एक प्रशासनिक ईकाई होता था, जिसमें किला होता भी था या नहीं भी होता था, जो पारंपरिक रूप से 84 गांवो पर नियंत्रण रखते थे। बाद में स्थान का महत्व अधिक बढ़ जाने के कारण गढ़ शब्द अन्य अनेक बस्तियों के नाम के साथ प्रत्यक्ष रूप से जोड़ दिया गया। फुलझर जमीदारी के इतिहास की पाण्डुलिपि से पता चलता है, कि गोड़ शासकों के आगमन के पूर्व सारंगढ़ सारंगपुर कहलाता था।[5]

1.2 सारंगढ़ रियासत का भौगोलिक परिचय :-

किसी प्रदेश के इतिहास एवं संस्कृति को प्रभावित करने वाले आधारभूत कारणों से संबंधित भू-भौतिकी पर्यावरण को नियामक तत्व केरूप में स्वीकार किया जाता हैं। भारत वर्ष के अंतर्गत अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के कारण आदिम संस्कृति की विशेषताओं को संजोये रखने में समर्थ अनेक छोटे-छोटे प्रदेश विद्यमान है।[6] इस दृष्टिकोण से नवगठित छत्तीसगढ़ राज्यांतर्गत सारंगढ़ रियासत का क्षेत्र उल्लेखनीय माना जा सकता है।

1.2.1 स्थिति तथा विस्तार :-

छत्तीसगढ़ के पूर्वी भाग में 21 -21 ̊ और 21 -45 ̊ उत्तरी अक्षांश तथा 82 -56 ̊ और 83 -26 ̊ पूर्वी देशान्तर के मध्य सारंगढ़ रियासत स्थित है।[7] सारंगढ़ रियासत का क्षेत्रफल 540 वर्गमील[8] या 1339 किलोमीटर था।[9] क्षेत्रफल की दृष्टि से [illegible] छत्तीसगढ़ की [illegible] [illegible] वर्गमील के [illegible]

स्थान बारहवा था।[10] इसके उत्तर में महानदी और चन्द्रपुर जमींदारी, दक्षिण में फुलझर जमींदारी, पूर्व में संबलपुर जिला और पश्चिम में भटगांव और बिलाईगढ़ जमीदारियां है।[11]

1.2.2 भू -आकृति :-

धरातलीय स्वरूप मानव का सम्पूर्ण आर्थिक एवं सामाजिक क्रियाओं को प्रभावित करते है, अत: इनका अध्ययन आवश्यक है। पृथ्वी की बनावट सर्वत्र समान नहीं है, इसमें अनेक विषमतायें है। कहीं-कहीं उबड़-खाबड़ पठार है तो कहीं समतल मैदान है। भू-आकृति की दृष्टि से सारंगढ़ रियासत को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1.2.2.1 महानदी घाटी -

महानदी घाटी चांवरढाल तथा सारंगढ़ पहाड़ियों के बीच फैली हुई है। यह पश्चिम में अधिक चौड़ी तथा पूर्व की ओर धीरे-धीरे संकरी होती गयी है। समुद्र तल से इसकी सामान्य ऊँचाई 128.8 मीटर है।[12] यह मैदानी भू-भाग कृषि की दृष्टि से अनुकूल है। समतलीय धरातल होने के कारण विभिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाती है, जिसमें धान, गेहूँ, मुंगफली तथा नदियों के कछारी भाग में सब्जियां लगायी जाती है। इस क्षेत्र की जनसंख्या में सघनता पायी जाती है।[13]

1.2.2.2 उच्च पहाड़ी क्षेत्र -

सारंगढ़ रियासत का भाग प्राय: समतल है, किन्तु कुछ पहाड़िया जिनकी प्रमुख पंक्ति रायपुर जिले की सोनाखान पहाड़ियों से पश्चिम से पूर्व की ओर फैली हुई है जो दक्षिणी सीमा के साथ रायपुर की ओर ढालू है तथा सारंगढ रियासत की समतल स्थलाकृति को खण्डित करती है।[14] उत्तर से दक्षिण की ओर जाने वाला यह पहाड़ी सिलसिला सारंगढ़ रियासत को दो परगनों क्रमश: सारंगढ़ एवं सरिया में विभक्त करता है।[15] इस प्रक्षेप में लगभग सभी महत्वपूर्ण चोटियां दक्षिणी सीमा के किनारे-किनारे स्थित है, उनमें सबसे ऊँची चोटी सारंगढ़ नगर की मध्यान्ह रेखा के समीप स्थित है जो 582.5 मीटर ऊँची है।[16]

1.2.3 भू- संरचना :-

सारंगढ क्षेत्र की भू-पर्पटी एक के ऊपर एक जमी विभिन्न प्रकार की चट्टानों की परतों से बनी है। चट्टानों की ये परते कालक्रम मे पृथ्वी का इतिहास व्यक्त करती है। आधार की तलीय चट्टान रवेदार (क्रिस्टलीय) है तथा इस पर जीवाश्म के कोई चिन्ह दृष्टिगोचर नही होते है, ये चट्टानें लगभग 25,000 लाख वर्ष पहले की मानी जाती हैं, जो सभवत: पृथ्वी के ठण्डे होने का सम य था। इन चट्टानों पर स्थित चट्टाने परतदार है और ये उत्तरवर्ती काल की है। सबसे ऊपरी सतह नूतन युग की मानी जा सकती है।[17]

आद्य -महाकल्प की समाप्ति पश्चात एक लंबा काल ऐसा था, जिसका कोई इतिहास नहीं मिलता है। इस काल की पर्वत निर्माण क्रिया के फलस्वरूप मोडदार पर्वतो का निर्माण हुआ जो कालांतर मे कटकर समाप्त हो गये और इस कटी हुई सतह पर बाद के काल मे चट्टानो का निक्षेपण हुआ, इन्हे पुराशेल समूहो की सज्ञा दी जाती है

जिसके कुडप्पा और विंध्यन दो भाग माने जाते है।[18]

इसके पश्चात् का युग नव महाकल्प कहलाता है तथा जिसका विस्तार अपर कार्बनी कल्प से नूतन युग तक माना जाता है, इस ऊपर कार्बनी कल्प में भू-संरचना अंर्तभौमिक क्रियाओं से प्रभावित हुई। इस कल्प के शैल समूह गोंडवाना के नाम से जाने जाते है। इसके बाद का कल्प अभिनव तथा प्राकअभिनव काल के शैल समूहों के नाम से जाने जाते हैं। इसी कल्प में दो महत्वपूर्ण घटनाएं हुई। गोंडवाना महाद्वीप टूटकर छोटे-छोटे भागों में विभाजित हो गया तथा इसके बीच का भाग सागर में डूब गया। टेथिस सागर का विशाल निक्षेपण मोड़कर पर्वत के रूप में ऊपर उठा जो आज का हिमालय है। इसका प्रभाव सारंगढ़ रियासत पर पड़ा यहां के सभी नदी नाले उत्तर से दक्षिण की ओर बहते है। सारंगढ़ रियासत का भू-भाग भारत के प्रायद्वीपिय शील्ड प्रदेश का एक भाग है और भारत के मुख्य कटिबंध से बाहर है। इसी कारण भारत में आ.ये भूकम्पों का इस नगण्य प्रभाव पड़ा। सारंगढ़ रियासत का भू-भाग छत्तीसगढ़ बेसीन की तलछटी चट्टानों से आच्छादित है जिसे दो भागों में बांटा जा सकता है। निचला भाग मुख्यत: कड़े क्वार्टजाइट पत्थर का बना है, जिसके मध्य शैल अथवा स्लेट पत्थरों की पट्टियां है। ऊपरी भाग जो शैल तथा चूने पत्थरों से बना है, महानदी के निकट मैदानों में स्थित है।[19]

1.2.4. खनिज :-

खनिज संसाधनों की दृष्टि से यह क्षेत्र अत्यंत पिछड़ा हुआ है, यहां के प्रमुख खनिज चूने के पत्थर तथा स्लेट पत्थर है। ग्राम जोगनीपाली के समीप चूने पत्थर के भण्डार है।[20] ग्राम गुडे में चूने पत्थर के विशाल भण्डार है।[21] अन्य खनिजों की दृष्टि से यह क्षेत्र निर्धन है।

1.2.5 मृदा :-

सारंगढ़ रियासत क्षेत्र की मिट्टी सामान्यत: साधारण किस्म की है। इस क्षेत्र में प्रचिलत मिट्टी की पारिभाषिक शब्दावली के अनुसार यहां की कृषि मिट्टियां मटासी, कन्हार, डोरसा कछार, और भांटा के नाम से जानी जाती है। कन्हार मिट्टी काली और चिकनी होती है, डोरसा की रंगत लाल होती है परन्तु उसमें कुछ भूरापन होता है इसमें एक तरह के बड़े-बड़े कंकड़ पाये जाते है, जिन्हें चमार गाटे कहते है। मटासी का रंग पीला होता है यह भूरी से लाल रंग की होती है, जिसमें मिट्टी और रेत का मिश्रण प्राय: बराबर रहता है। भांटा मिट्टी लैटराइट से बनी लाल रंग की घटिया मिट्टी होती है, इसमें मुर्मिले कंकड़ों की अधिकता रहती है। इसमें अधिक गाढ़ापन नहीं होता है तथा इसमें नमी भी नहीं रह पाती है। नदी नाले के किनारे की उपजाऊ मिट्टी कछार कहलाती है।[22]

1.2.6. अपवाह तंत्र :-

सारगढ रियासत के भू-भाग अथवा इसके निकटस्थ प्रवाहित होने वाले नदी-नालों में महानदी मुख्य है। महानदी रायपुर जिले के नगरी गाव से कुछ किलोमीटर पूर्व सिहावा 20°-30' तथा 82°-5' पूर्व से निकलकर उत्तर पूर्व की ओर बिलासपुर जिले में बहते हुये पूर्वी सीमा पर रायगढ तथा सारगढ रियासतों के मध्य प्राकृतिक सीमा निर्मित करते हुये लगभग 13 कि.मी. बहती है। आगे यह नदी 8 कि.मी. तक सारगढ रियासत की उत्तरी सीमा के

किनारे-किनारे बहती है।[23] वर्षा ऋतु के दौरान नदी में बाढ़ आ जाती है और महानदी अपने नाम को सार्थक करती दिखाई देती है। आगे चलकर यह उड़ीसा प्रांत होते हुये बंगाल की खाड़ी में गिरती है।[24]

कैलो नदी, लैलूंगा पठार के पश्चिम भाग से 22^0-30' उत्तर तथा 83^0-33' पूर्व पर स्थित 723 मीटर की ऊंचाई पर तुड़ेग पहाड़ी से निकलती है और दक्षिण की ओर बहती हुई आगे चलकर माण्ड नदी में मिल जाती है।[25]

सारंगढ़ रियासत की दक्षिणी सीमा पर स्थित पहाड़ियों की दक्षिणी कगार से लीलार और लाठ नाले निकलते है तथा केकामंदी नाला कोइलबहाल पहाड़ से निकलती है, ये सभी महानदी में मिल जाते है।[26]

1.2.7 जलवायु :-

सारंगढ़ रियासत की जलवायु गर्मी में गर्म शुष्क होती है और दक्षिण-पश्चिम मानसून से अच्छी वर्षा होती है। शीत ऋतु दिसंबर से फरवरी तक तथा ग्रीष्म ऋतु मार्च से जून तक रहती है। मध्य जून से दिसंबर तक दक्षिण-पूर्वी मानसून सक्रिय रहता है।[27] इस भौगोलिक क्षेत्र की विशेषता यह है कि इसे दक्षिण पश्चिम मानसून (अरब सागर) के साथ ही दक्षिण पूर्वी मानसून (बंगाल की खाड़ी) का भी लाभ मिलता है।[28] वर्षा की कमी का अनुभव यहां कभी नहीं रहा। सारंगढ़ रियासत की औसत वर्षा 40 इंच है।[29] इस वर्षा के परिणामस्वरुप यहां खरीफ फसलों का ही उत्पादन अधिक होता है।

1.2.8 वन तथा वन्य प्राणी :-

सारंगढ़ रियासत का लगभग 202 वर्गमील का क्षेत्र साल वृक्षों से आच्छादित है, जो मुख्यत: सारंगगढ़ और सरिया परगने के मध्य तथा फुलझर जमींदारी की सीमा पर है। साल के अतिरिक्त साजा, तेन्दू, पलाश, धौरा, आंवला और चार के वृक्ष इन वनों में हुआ करते है। वनों के अधिकांश हिस्से में बाँस पाये जाते हैं। सारंगढ़ नगर के घोघरा नाला के किनारे कोटंग बाँस मिलते हैं एवं सरायपाली और तुरीपारा के निकट इनके घने-घने वन हैं। महुआ तथा फलदार वृक्षों को नि:शुल्क काटने की लोगों को छूट थी।[30]

सारंगढ़ रियासत के वनों में शेर और चीते बहुत हैं, तथा हिरण बिल्कुल नहीं पाये जाते हैं।[31] प्रारंभ में इन वनो में जंगली भैंस बड़ी संख्या में पाये जाते थे, लेकिन 1870 के पूर्व के कुछ वर्षो में ये लुप्तप्राय हो गये क्यों कि लोगों ने तीरो से आक्रमण करके इनमें से अधिकांश को मार डाला था, किन्तु झुण्ड में घुमते हुये ये यदा-कदा दिखाई देते है।[32] ठण्ड के मौसम में बत्तख, मोर एवं फलों के मौसम में हरे कबूतर बड़ी संख्या में दिखाई देते है।[33]

1.2.9 यातायात :-

सारंगढ़ रियासत में प्रथम श्रेणी की सडके नही थी, तथापि सारंगढ़ से रायगढ , बिलासपुर और सोहेला तक द्वितीय श्रेणी की सडकें थी। सम्पूर्ण सारंगढ रियासत महानदी द्वारा रेलमार्ग से पृथक थी तथा माण्डनदी द्वारा भी यातायात अवरूध्द हो जाता था, जिसे रायगढ को जाने वाली सडक से पार करना पडता था। पार उतारने वाली नौकाओं के अतिरिक्त खुले मौसम में महानदी पर एक मार्ग और एक पुल बनाया जाता था। सारंगढ रियासत के सरिया परगने के लोग उत्पादित खाद्यान्न तथा व्यापारिक वस्तुएं रायगढ रियासत के सुरजगढ को भेजते थे। शेष भाग

की वस्तुएं रायगढ तथा खरसियां रेल्वे स्टेशन को भेजी जाती थी। रियासत में आवागमन के साधन के रूप में मुख्यत: ठोस पहिये वाली बैल गाड़ियां या भैंस गाड़ियाँ चला करती थी। [34]

इस प्रकार स्पष्ट है कि सारंगढ़ रियासत का क्षेत्र स्वयं अनेक भौगोलिक विशेषताओं से युक्त रहा है, जिसने सारंगढ़ के इतिहास को प्रभावित किया है।

1.3 सारंगढ़ रियासत का ऐतिहासिक परिचय

1.3.1 प्रागऐतिहासिक काल :-

यद्यपि प्रागऐतिहासिक काल के इतिहास में सारंगढ़ रियाासत के भू-भाग का कोई स्पेष्ट उल्लेख नहीं मिलता है तथापि इस इतिहास के निर्माण में इस अंचल के योगदान को विस्तृत नहीं किया जा सकता हैं। छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध पुरातत्व विद् पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय के अनुसार यह अंचल मनुष्य जाति का जन्म स्थल है तथा मानव जाति की आदि सभ्यता यहीं पली थी।[35] इस विलुप्त अरण्य सभ्यता की एक झलक सारंगढ़ रियासत के भू-भाग तथा समीपवर्ती क्षेत्र में स्थित विभिन्न शैलाश्रयों तथा यहां प्राप्त हुये प्रस्तर उपकरणों से परिलक्षित होती है।

सारंगढ़ रियासत के समीपवर्ती चांवरढाल पहाड़ियों के शैलाश्रयों में रेल्वे के एक इंजीनियर ने सन् 1910 में अनेक गुफाचित्रों की खोज की थी। प्रागऐतिहासिक काल में ही जब मनुष्य पर्वत कन्दराओं में निवास करता था, तब उसने इस शैलाश्रयों में अनेक चित्र बनाये थे जो उसके अलंकरण प्रिय एवं कलाप्रिय होने का प्रमाण है।[36] सिंघनपुर तथा कबरा पहाड़ में अंकित शैलचित्र इसके अनुपम उदाहरण है। कबरा पहाड़ में लाल रंग से छिपकली, घड़ियाल, सांभर, अन्य पशुओं तथा पंक्तिबद्ध मानव समूह का चित्रण किया गया है। [37] सिंघनपुर में मानव आकृतियां सीधी, डण्डे के आकार की तथा सीढ़ी के आकार में अंकित की गई है। [38] सारंगढ़ रियासती क्षेत्र में सिरोली डोंगरी में भी शैल चित्र उपलब्ध है [39] तथा परिसरवर्ती क्षेत्र बसनाझर, ओंगना, करमागढ़, बेनीपाट, खैरपुर तथा लेखाभाड़ा में आदि मानव अपने स्मृति चिन्ह छोड़ गये हैं। [40] छत्तीसगढ़ अंचल के पुरातात्विक सर्वेक्षण के दौरान सारंगढ़ रियासती भू-भाग तथा परिसरवर्ती क्षेत्रों क्रमश: सिंहनपुर, केलोनदी का कछार, कटंगनाला तथा टेरम आदि स्थानों में आदिमानव द्वारा उपयोग में जाये जाने वाले वृहदाश्म, मध्याश्म, पुराश्म तथा नव पाषाणयुगीन विभिन्न प्रस्तर उपकरण प्राप्त हुये हैं। [41]

स्पष्ट है कि प्रागऐतिहासिक युग से सभ्यता औंर संस्कृति के निर्माण तथा इतिहास के कालचक्र को गतिशील रखने में यह अंचल अपने अस्तित्व के अनुरुप यथाशक्ति योगदान देता आया है। यद्यपि इतिहास के गौरवपूर्ण पृष्ठों में उसे उल्लेखनीय स्थान नहीं मिल पाया, तथापि इतिहास की नींव को पुख्ता करने में उसकी सहभागिता से इंकार नहीं किया जा सकता है।

1.3.2 प्राचीनकाल :-

प्राचीनकाल में सारंगढ़ रियासत के क्षेत्र दक्षिण कोसल में सम्मिलित था। इस क्षेत्र का वर्तमान नाम छत्तीसगढ़ आधुनिक प्रतीत होता है, संभवत: इसका यह नया नाम 18 वीं सदी में पड़ा हो।[42] इस अनुमान का कारण

यह है, कि मुगलकाल में इस क्षेत्र को रतनपुर राज्य कहा गया है। [43] इससे यह संकेत मिलता है, कि शायद मराठा काल के आरंभ में ही इसका नाम छत्तीसगढ़ पड़ा हो। आधिकारिक रूप से इस क्षेत्र के लिये छत्तीसगढ़ शब्द का प्रयोग पहली बार सन्1795 ई. में किया गया ।[44] इससे यह अनुमान किया जाता है, कि संभवत: मराठाकाल में ही इस नाम को प्रसिद्धि मिली हो। [45] वस्तुत: कलचुरिवंश के बाद जब इस क्षेत्र पर मराठों का अधिपत्य हुआ तब इस क्षेत्र में पाये जाने वाले प्रमुख गढ़ों की संख्या के आधार पर इसे छत्तीसगढ़ कहा गया , यह नाम किसी व्यक्ति या वंश से संबंधित न होकर यहां की प्रशासकीय व्यवस्था से संबंधित है। [46]

ऐसी मान्यता है, कि श्रीराम की माता रानी कौशल्या संभवत: इस क्षेत्र की राजकुमारी थी। दक्षिण कोसल संभवत: उत्तर कोसल की राजधानी अयोध्या के इक्ष्वाकु नरेशो का उपनिवेश था। [47] बिलासपुर जिले में कोसला नामक एक बड़ा सा ग्राम है, कौशल्या यही के राजा भानुमंत की पुत्री थी। [48] रामायण के अनुसार दण्डकारण्य में श्रीराम के लोकोद्धार संबंधी कार्यो की नींव पड़ी और यहां कितने ही स्थान उनके स्मृतियों को अभी तक सुरक्षित रखे हुये है। [49]

संभवत: रामायण काल के पूर्व से ही विंध्याचल के दक्षिण में आर्यो का आगमन और निवास आरंभ हो गया था और क्रमश: उनमें इतनी अधिक वृद्धि हो गयी थी, कि महाभारत काल तक बड़े-बड़े राज्यों की स्थापना हो गई। [50]

आर्यो के प्रवेश के पूर्व इस संम्पूर्ण क्षेत्र में कोल, निषाद और द्रविड़ों के अनेक छोटे-छोटे राज्य थे। इनमें से सबरों का अनेक ग्रंथों में उल्लेख मिलता है। बाणकविकृत हर्षचरित में सबरों को विंध्याचल का निवासी कहा गया है। रामायण में सबरी की कथा प्रसिद्ध है। आज भी इस भू-भाग में सबरा जाति के लोग पये जाते हैं। सारंगढ़ नरेश के पास ऐसे ताम्रपत्र मौंजूद थे जो सबरा राजाओं द्वारा जारी किये गये है, इससे ज्ञात होता है, कि आर्यो के प्रवेश के समय यहां सबरों का राज्य रहा होगा। [51]

यद्यपि छत्तीसगढ़ में मौर्यकालीन इतिहास का पर्याप्त पर्यवेक्षण नहीं हो पाया है, तथापि ऐसा अनुमान है, कि यह भू-भाग नंदो और मौर्यो के विस्तृत साम्राज्य के अंतर्गत था। सुविख्यात चीनी यात्री ह्वेनएसांग को अपने यात्रा विवरण में लिखा है, कि मौर्य राजा अशोक ने दक्षिण कोसल की राजधानी में स्तूप तथा अन्य इमारतों का निर्माण कराया था। [52] अशोक के समय के दो भित्तीलेख सरगुजा जिले के लक्ष्मणपुर के निकट जोगीमारा गुफा में है, जिसकी भाषा पाली है। ईसा पूर्व 300 के आसपास के चांदी के सिक्के रायपुर जिले के तारापुर तथा सारंगढ़ और बिलासपुर जिले के अकलतरा में प्राप्त हुये हैं। [53] मौर्य सिक्कों की प्राप्ति एक ऐसा संतोषजनक प्रमाण है, जिससे यह सिद्ध होता है कि यह क्षेत्र मौर्यो के विशाल साम्राज्य का अभिन्न अंग था।

शुंग और कण्व शासकों की इस भू-भाग पर सत्ता के विषय में कोई प्रामाणित जानकारी नहीं मिलती है। जबकि इस क्षेत्र में सातवाहनकालीन पाषाण प्रतिमाएं किरारी ग्राममें मिले काष्ठस्तंभ तथा बालपुर ग्राम में मिले सातवाहनकालीन सिक्के यह सिद्ध करते है, कि इस क्षेत्र पर सातवाहनों का अधिकार था। [54]

संभवत: सातवाहनों के पश्चात दक्षिण कोसल एक स्वतंत्रराज्य के रूप में अस्तित्व में आया। इतिहास वेत्ताओं का यह कहना है, कि ईसा की चौथी शताब्दी में कोसल दो भागों में विभक्त हो गया . उत्तरी भाग जिसे दक्षिण कोसल कहा जाता था का राजा महेन्द्र तथा बस्तर और सिहावा आदि दक्षिण भाग जो महाकांतर नाम से प्रसिद्ध था का शासक व्याघ्रराज था। [55] समुद्रगुप्त ने अपने दक्षिण विजय अभियान में इन दोनों को पराजित कर पुन: सत्तारूढ

कर दिया था [56] इस प्रकार यह क्षेत्र गुप्त सम्राटों के प्रभाव क्षेत्र के अंतर्गत बना रहा।

इसी अवधि में इस भू-भाग पर शरभपुरिया राजवंश का शासन स्थापित होने लगा महासुदेवराज के सारंगढ़ दानपत्र तथा महाप्रवरराज के ठाकुरदिया पट्ट से यह निश्चित प्रमाण मिलता है, कि यह क्षेत्र शरभपुर के अंतिम शासकों के काल तक उनके अधिकार में बना रहा , कुछ विद्वानों का कहना है, शरभपुरिया शासकों की राजधानी सारंगढ़ में ही स्थित थी। [57]

शरभपुरिया शासकों के पतन के पश्चात् यह क्षेत्र पाण्डुवंशियों शासकों के अधीन हो गया। इस वंश के शासक महाशिवगुप्त के शिलालेख सारंगढ़ रियासत के ब्राम लोधिया तथा बरदुला में प्राप्त हुये है। [58]

पाण्डुवंशियों के पतन के बाद सोमवंशियों ने इस क्षेत्र पर राज्य किया इस वंश के अंतिम शासक उद्योत केसरी महाभवगुप्त चतुर्थ ने सोमवंश की एक अन्य शाखा को इस राज्य का पश्चिमी भाग दे दिया जिसमें सारंगढ़ का भू-भाग सम्मिलित था। इस वंश के इन्द्ररथ को 1023 ई. के लगभग राजेन्द्र चोल द्वारा पराजित कर मार डाला गया। [59] इस प्रकार संबलपुर - सोनपुर क्षेत्र जिसमें सारंगढ़ सम्मिलित था, कुछ समय के लिये चोलवंश के हाथ में चला गया। इसी समय त्रिपुरी के कलचुरियों की एक शाखा ने ग्यारहवीं शताब्दी के आंरभ में तुम्माण तथा बाद में रतनपुर में अपनी राजधानी बनाकर इस क्षेत्र पर अधिकार करना प्रारंभ किया, सामान्यत: यह विश्वास किया जाता है, कि सारंगढ़ तथा आसपास का क्षेत्र उनके राज्य का अभिन्न अंग था। [60]

स्पष्ट है, कि सारंगढ़ रियासत का भू-भाग प्राचीनकाल में दक्षिण कोसल का एक भाग था, तथा रामायण काल से लेकर ग्यारहवीं शताब्दी में कलचुरियों की सत्ता स्थापित होने तक उत्तर तथा दक्षिण भारत के राजवंशों के प्रभाव के अंतर्गत रहा। अत: यह कहा जा सकता है, कि सारंगढ़ रियासती भू- भाग उत्तर तथा दक्षिण की राजनीतिक व्यवस्था का ही नहीं, अपितु संस्कृति का भी समन्वय का केन्द्र रहा है।

1.3.3 मध्यकाल :-

त्रिपुरी के हैहयवंशी कलचुरियों की एक शाखा के राजकुमार कलिंगराज ने 1000 ई. या उसके आसपास बिलासपुर जिले के तुम्माण को अपनी राजधानी बनाया और इस तरह रतनपुर राजवंश या दक्षिण कोसल के कलचुरि राजवंश की नींव पड़ी। [61] कलिंगराज के बाद 1020 ई. से 1045 ई. तक उसके पुत्र कमलराज ने शासन किया। कमलराज का पुत्र रतनदेव महान निर्माता था , [62] उसने तुम्माण में बंकेश्वर, रत्नेश्वर आदि देवालय और अनेक उद्यान बनवाकर तुम्माण नगर को सुंदर बना दिया। रतनदेव ने मणिपुर नामक प्राचीन गाँव को नगर के रूप में परिवर्तित कर उसे रतनपुर नाम दिया और 1050 ई. में अपनी राजधानी तुम्माण से हटाकर रतनपुर में स्थापित की। [63] सन् 1065 ई. के लगभग रतनदेव का पुत्र प्रथम पृथ्वीदेव गद्दी पर बैठा । [64] उसका पुत्र जाजल्लदेव बडा प्रतापी था .। त्रिपुरी के शासक यशकर्ण की दुर्बलता का लाभ उठाकर उसने पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। [65] उसने दक्षिण कोसल के राजा को हराया था और संभवत: उडीसा पर भी विजय प्राप्त की थी जो कि आधुनिक संबलपुर जिले से मिलकर बना है और पहिले यह पटना और सोनपुर का राज्य था। इन प्रदेशों के शासक जाजल्लदेव को वार्षिक कर देते थे। [66] निःसंदेह जाजल्लदेव अत्यंत प्रतापी था । उसने अपनी योग्यता से न केवल रतनपुर राज्य को स्वतंत्र किया अपितु साम्राज्य विस्तार कर अपनी क्षमताओं का परिचय दिया. उसके शासनकाल में सारंगढ़ का भू-भाग उसके साम्राज्य

का अभिन्न अंग था तथा एक प्रशासकीय इकाई रूप में जाना जाता था।

जाजल्लदेव के बाद उसका पुत्र रतनदेव द्वितीय (1120-1135 ई.) तत्पश्चात् उसका पौत्र पृथ्वीदेव द्वितीय गद्दी पर बैठा। पुरी के खुर्दा उपसंभाग में इन दो कलचुरि नरेशों के कतिपय सिक्कों की खोज से पता चलता है, कि उनका उड़ीसा पर कुछ अधिकार रहा होगा, किन्तु कम से कम सारंगढ़ का भू-भाग उनके प्रभाव से मुक्त रहा होगा जैसा कि इन शासकों के योग्य मंत्री जगपालदेव के राजिम शिलालेख से ज्ञात होता हैं, कि उसने अपने स्वामी के लिये राठा टेरामा, तमनाला, सरहरागढ़ (सारंगढ़) , नवकाशी, लव आदि किलों पर विजय प्राप्त की थी। [67]

ऐसा प्रतीत होता है कि बारहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में रतनदेव द्वितीय तथा पृथ्वीदेव द्वितीय के शासनकाल में कलचुरियों की सत्ता कुछ कमजोर हो गई थी। उसका लाभ उठाकर सारंगढ़ के स्थानीय सामंत स्वतंत्र हो गये होंगे। इन्हीं प्रदेशों को प्राप्त करने के लिये जगपालदेव ने आक्रमण किया होगा। कलचुरि राज्य में सम्मिलित होने के पूर्व सारंगढ़ में एक ऐसे वंश का शासन था जिसका एक राजा पुजारीपाली (सारंगढ़ का ग्राम) शिलालेख के अनुसार गोपालदेव था। यह आदिनांकित अभिलेख ग्यारहवीं अथवा बारहवीं शताब्दी का बताया जाता है। [68]

कहा जाता है कि उसकाल में सारंगढ़ में भैना जाति के राजा राज्य करते थे , फुलझर स्टेट की हस्तलिखित पाण्डुलिपि से ज्ञात होता है कि सारंगढ़ के पास भैनार नामक ग्राम है जिसे भैना राजाओं ने बसाया होगा , गोड़ राजाओं के उत्कर्ष काल तक इनका शासन सारंगढ़ में था। भैना जाति के राजा रतनपुर नरेश पृथ्वीदेव के समय माण्डलिक के रुप में शासन करते रहे। [69] इस बात की गुंजाईश है, कि पुजारीपाली शिलालेख में वर्णित गोपालदेव इसी वंश का रहा होगा, यह दुर्भाग्य का विषय है कि इस वंश के शासकों की वंशावली अब तक अप्राप्त है।

बाबू रेवाराम द्वारा हस्तलिखित ग्रंथ " तवारिख श्री हैहयवंशी राजाओं की" से पता चलता है कि तेरहवीं शताब्दी के प्रारब्ध में रतनपुर के शासक नरसिंहदेव कलियुग 4326 संवत् 1282 में शासक हुये जिन्होने 30 वर्षों तक शासन किया अर्थात् सन् 1225-1 255 ई. तक इनका शासन रहा। [70] राजा नरसिंहदेव एक पड़ोसी शासक के साथ युद्ध कर रहा था उस समय जगदेवसाय ने उनकी सेवा की। [71] राजा नरसिंहदेव चंदेलवंशी रणधीर साय केसाथ युद्धरत थे, तब जगदेवसाय को नरसिंहदेव ने सेनापति बनाकर युद्ध में भेजा। जगदेवसाय ने चंदेल शासक को पराजित कर उनका राजकीय निशान राजा नरसिंहदेव को प्रस्तुत किया। इस वीरता से प्रसन्न होकर महाराज नरसिंहदेव ने जगदेवसाय को सारंगढ़ परगना (84 गांव की प्रशासनिक इकाई) तथा दीवान की पदवी प्रदान किया बदले में 1150/- रू. मुल्की मालगुजारी सारंगढ़ दीवान द्वारा कलचुरी शासक को दिया जाता था। [72] इस प्रकार सारंगढ़ रियासत में राजगोड़ वंश की सत्ता स्थापित हुई जिसके प्रथम दीवान जगदेवसाय हुये। परंपरागत सूचनाओं के आधार पर यह कहा जाता हैं कि जगदेवसाय लांजी (महाराष्ट्र) से यहां आये। [73]

यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक हैं, कि सारंगढ़ रियासत छत्तीसगढ़ में हैहयवंशी कलचुरि शासक के पूर्ण नियत्रण में नहीं, अपितु अधीनस्थ थी। कलचुरि शासक के स्थानीय सामंत का इस रियासत पर अधिकार था तथा वह आंतरिक प्रशासन के मामले में हैहय शासक से स्वतंत्र थे। वे केवल अपने सर्वोच्च हैहय शासक को वार्षिक कर का भुगतान करते थे। [74]

कलचुरि वंश के शासक प्रतापमल्ल ने अपनी सत्ता बनाये रखी तत्पश्चात् छत्तीसगढ़ स्थित कलचुरियों का साम्राज्य 1375 ई. में दो भागों में विभाजित हो गया। [75] पश्चिमी भाग की राजधानी रायपुर तथा पूर्वी भाग की राजधानी रतनपुर बनाई गई तथा इन दोनों राज्यों में कलचुरिवंश के शासक राज्य करने लगे। [76] रतनपुर के प्रसिद्ध

विद्वान बाबू रेवाराम कायस्थ के अनुसार प्रतापमल्ल के बाद क्रमशः जयसिंहदेव, धर्मसिंहदेव, जगन्नाथसिंहदेव, वीरसिंहदेव, कमलदेव, शंकरसाय, मोहनसाय, दादूसाय, पुरूषोत्तम साय तथा बाहरसाय आदि राजा हुये।[77]

पटना के शासक रामदेव से बंटवारे में उसके भाई बलरामदेव ने संवत् 1530 (सन् 1473) में संबलपुर क्षेत्र को प्राप्त किया। हैहयवंशी शासक मोहनसाय को उसने पराजित किया तथा सन् 1477 के आस-पास सारंगढ़ को संबलपुर अठारागढ़ जात में शामिल कर लिया तथा मालगुजारी 1150 रू. जो रतनपुर के हैहयवंशी शासक को देते थे, के अनुरूप तय कर दिया।[78]

मध्यकाल में रतनपुर शासकों के दुर्बल होने पर छत्तीसगढ़ के पूर्वी हिस्से के शासकों ने उड़ीसा के संबलपुर और अन्य राज्यों के साथ मिलकर अठारागढ़ या गढ़जात नामक संघ बना लिया, जिनमें एकता विद्यमान थी।[79] अठारागढ़ के राजाओं में चौहान वंशीय राजपूत और राजगोड़ दोनों शामिल थे। अठारागढ़ या गढ़जात के सदस्यों में वर्चस्व घटते बढ़ते रहता था। प्रारंभिक दौर में पटना के शासक अधिक प्रभावशाली थे तथा उनके साथ समर्थन में आठ शासकों का एक गुट बन गया था। पटना के गुट का असर कम होने पर संबलपुर का चौहान वंशीय शासक प्रभावशाली बना।[80]

इस प्रकार पता चलता है कि सारंगढ़ रियासत के दीवान सन् 1477 के आसपास कलचुरियों के नियंत्रण से निकलकर महाराज पटना तथा संबलपुर अठारगढ़जात राज्य में शामिल हो गया।

रतनपुर नरेश बाहरसाय जिसने संभवतः 1480 ई. से 1515 ई. तक शासन किया कि पठान साहसिकों से झड़पे हुई। कोसंगई शिलालेख के अनुसार बाहर ने इन लोगों पर विजय प्राप्त की।[81]

बाहर साय का उत्तराधिकारी कल्याण साय सम्राट जहांगीर का समकालीन था तथा जहांगीर के शासनकाल के चौदहवें वर्ष वह जहांगीर के दरबार में गया था।[82] वह दिल्ली में आठ वर्ष तक रहा तथा फिर अनेक उपाधियां और सम्मान प्राप्त कर रतन पुर लौट आया उसके उत्तराधिकारी दिल्ली के शाही घराने को कर का भुगतान करते थे।[83]

स्थानीय जनश्रुति के अनुसार बाहर साय के बारह उत्तराधिकारी थे, जिन्होंने 1742 ई. तक रतनपुर के राज्य पर शासन किया। इस वंश का अंतिम शासक रघुनाथ सिंह हुआ जो 1732 ई. में 60 वर्ष की अवस्था में गद्दी पर बैठा। इस समय रतनपुर राज्य अत्यंत निर्बल हो चुका था तथा उसके अधिनस्थ गढ़ाधिपति खुल्लम खुल्ला विरोध प्रकट करने लगे थे।[84] जब राज्य ऐसी परिस्थिति से गुजर रहा था सन् 1740 के अंतिम चरण में नागपुर के भोसला राज्य के सेनापति भास्कर पंत ने छत्तीसगढ़ पर आक्रमण कर दिया और राजधानी रतनपुर पर भोंसलों का अधिकार हो गया।[85] राजा रघुनाथ सिंह पर भास्कर पंत ने इतनी कृपा दिखाई कि उसे नाम का राजा बने रहने दिया और कल्याण गिरि गुसाई को अपना प्रतिनिधि नियुक्त कर वहां से रवाना हो गया। रघुनाथ सिंह और कल्याण गिरि को मिलकर कार्य करना था मगर दोनों में पटरी नहीं बैठी।[86] रघुनाथ सिंह ने कल्याण गिरि को कैद कर लिया[87] अतः उसे सत्ताच्यूत कर दिया गया और जीविकोपार्जन के लिए उसे सिर्फ पांच गांव दिये गये।[88] और उसके स्थान पर मोहन सिंह को गद्दी पर बैठाया गया। इस प्रकार हैहयवंशी (कलचुरि) राज्य का अंत हो गया।

उपरोक्त अध्ययन पश्चात् यह कहा जा सकता है कि हैहयवंशी शासकों ने सन् 1000 ई. से लगभग

साढ़े सात सौ वर्षो के लंबे कालखण्डतक शासन किया, लेकिन इस अवधि में उनके शासनकाल को प्रभावशाली नहीं कहा जा सकता है। इनके समय में क्षेत्र में अनेक सामंत पदस्थ थे जो उनकी कमजोर सत्ता का लाभ उठाते हुए स्वतंत्र होते गये तथा पृथक रियासत बनते चले गये। इन स्वतंत्र रियासतों पर हैहयवंशीयों की नाममात्र की सत्ता थी। सारंगढ रियासत भी यद्यपि हैहयवंशीयों की करद राज्य थी किन्तु इनकी आंतरिक दुर्बलता के चलते वह महाराज पटना तथा कालातंर में संबलपुर अठारहगढ़जात समूह में अपने हितों की सुरक्षा हेतु सम्मिलित हो गई। मराठों ने छत्तीसगढ़ तथा संबलपुर क्षेत्र को अपने प्रभाव मे ले लिया तब सारंगढ़ रियासत भी मराठों की अधीनता में आ गयी।

1.3.4 मराठा काल :

औरंगजेब आलमगीर के शासन काल में दक्षिण भारत में मराठा शक्ति का उत्कर्ष हुआ। छत्रपति शिवाजी ने मराठों को संगठित कर भारत में उनका एकछत्र सार्वभौम राज्य स्थापित करने का लक्ष्य निर्धारित किया। मराठों की महत्वाकांक्षा इतनी बढ़ गई कि भारत के उन क्षेत्रों पर भी वे अधिकार संपन्नता दिखलाने लगे जो उनके अधिकार में नहीं आये थे। उन क्षेत्रों के निवासियों और राजाओं से चौथ वसूल करने का हक उन्हें सौंपा जाने लगा। मंशा यह थी कि सनद लो, जाओ लड़ो और उस प्रदेश को कब्जे में लेकर छत्रपति के राज्य में शामिल कर दो तथा प्रदत्त अधिकारों का उपयोग करो। [89]

छत्रपति शिवाजी ने सावाजी भोंसले नामक सैनिक की वीरता तथा आज्ञाकारिता से प्रसन्न होकर उसे सेना साहब सूबा की उपाधि से विभूषित किया और सन् 1674 में एक अधिकार पत्र देकर उसे बरार तथा गोंडवाना में चौथ वसूल करने के लिए अधिकृत किया। इस सनद के आधार पर सावाजी ने अपने भाई परसो जी को इस क्षेत्र में चौथ वसूल करने में लगा दिया। यही परसोंजी आगे चलकर नागपुर के भोंसला राज्य का संस्थापक बना। सन् 1699 में शिवाजी की मृत्यु उपरांत इस अधिकार पत्र का नवीनीकरण शिवाजी के उत्तराधिकारी से करा लिया गया, जिसमें छत्तीसगढ़ का स्पष्ट उल्लेख कराते हुए कुछ अन्य प्रदेश भी सम्मिलित कर लिये गये जिससे सेना साहब सूबा का अधिकार क्षेत्र और भी बढ़ गया। [90]

परसोजी को छत्रपति साहू ने सेना साहब सूवा का पद प्रदान करते हुए बरार, चांदा तथा गोड़वाना में चौथ वसूल करने की सनद ही, परसोजी की मृत्यु उपरांत उसका पुत्र कान्होजी उत्तराधिकारी हुआ। किन्तु आगे चलकर कान्होजी के भतीजे रघुजी ने छत्रपति शाहू को अपनी सेवाओं से प्रसन्न करके उनकी निकटता प्राप्त कर ली। किन्ही कारणों से शाह की कान्हो जी पर अकृपा हो गई तथा उसे दबाने के लिये रघुजी को भेजा गया। रघुजी ने सन् 1735 में देऊरगांव नामक स्थान में अपने चाचा कान्होजी को परास्त कर बंदी बना लिया। इसकी अंतिम परिणति यह हुई कि रघुजी को सेना साहब सूबा का पद प्रदान किया गया। [91]

छत्रपति शाहू ने रघुजी को जो सनद प्रदान किया था उसके अनुसार उन्हें बरार, गोंडवाना, बंगाल, छत्तीसगढ पटना, इलाहाबाद तथा मकसूदाबाद का प्रदेश अधिकृत करने कहा गया था। [92] सन् 1741 में वह नागपुर राज्य का वैधानिक राजा बन गया। इससे उसे एक मनोवांछित लाभ यह हुआ कि छत्तीसगढ होकर उड़ीसा तथा बंगाल पर चढाई करने का मार्ग मिल गया। [93]

छत्तीसगढ़ पर मराठों की शुरू से नजर थी, लालच भरी हुई। वन पहाड़ों से आच्छादित यह अचंल यथेष्ट रूप से धनी नहीं समझा जाता था पर धान तथा वनोपज ने इसे लुभावना बना दिया था। [94] एक बार मार्गदर्शन मिलते ही रघुजी मराठा शक्ति के प्रसार व विकास में लग गये। सौभाग्य से उनके पास भास्कर पंत नामक योग्य ब्राम्हण सेनापति भी था जो उनके योजनाओं को मूर्तरूप दे सकता था। [95] सन् 1740 में रघुजी के सेनापति भास्कर पंत ने अपने उड़ीसा और बंगाल अभियान के दौरान छत्तीसगढ़ में प्रवेश किया तथा रतनपुर पर अधिकार कर लिया। भास्कर पंत ने रतनपुर से एक लाख रुपया वसूल किया एवं सारा राज कोष तथा तोपखाना हड़प लिया किन्तु रघुनाथ सिंह को नाममात्र का राजा बने रहने दिया। भास्कर पंत ने कल्याण गिरि गुसाई को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया लेकिन रघुनाथ सिंह ने भास्करांत के पीठ फेरते ही पुनः राज्य पर अधिकार कर लिया। [96] सन् 1745 में रघुजी बंगाल अभियान से लौटते समय छत्तीसगढ़ में दाखिल हुआ जब वे छत्तीसगढ़ आये तो देखा कि रघुनाथ सिंह ने मराठा शक्ति को अस्वीकार कर दिया है। रघुजी को निश्चय ही गुस्सा आया और उन्होंने रघुनाथ सिंह को अपदस्थ करके मोहन सिंह को गद्दी पर बैठाया। [97]

मोहन सिंह के विषय में कई प्रकार की किवंदतियां प्रचलित है , कहीं उसे हैहयवंशीय रायपुर शाखा का बताया गया है तो कहीं उसे रघुजी भोसंले का अवैध पुत्र कहा गया है। [98] मोहन सिंह ने भोसंलों की अधीनता एवं नियंत्रण में सन् 1745 से 1758 तक शासन किया उसे भोंसलों के संकेतानुसार कार्य करना पड़ता था। [99]

रतनपुर पर अधिकार हो जाने के पश्चात सन 1755 तक मराठों का शासन संपूर्ण छत्तीसगढ़ तथा संबलपुर तक फैल गया। सारंगढ़ रियासत सहित आसपास की सभी जमींदारियां इनकी करद बन गई। [100] सारंगढ़ रियासत मराठों को प्रतिवर्ष 1600 रूपिया कौड़ी मालगुजारी अदा करती थी। [101]

नागपुर के राजा रघुजी की मृत्यु उपरांत उसका ज्येष्ठ पुत्र जानोजी नागपुर का राजा बना। छत्तीसगढ़ तथा उसके अधीनस्थ राज्य उसके कनिष्ठ पुत्र बिंबाजी को प्राप्त हुए। [102] बिंबाजी का शासन 1757 से 1787 तक रहा वह नाममात्र को ही नागपुर राजा के अधीन था। उसका रतनपुर में पृथक दरबार एवं न्यायालय, पृथक मंत्री एवं सलाहकार तथा पृथक मंत्री थे। [103] इस व्यवस्था में नागपुर राज्य किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं कर सकता था। विभिन्न पदों पर उसने मराठों की नियुक्तियां की। आरंभ में उसने जनता का बड़ा दमन किया पर शासन के उत्तरार्द्ध में उसने अपने व्यवहार को पर्याप्त रूप से संयत कर लिया तथा लोकप्रियता भी प्राप्त की। [104]

सन् 1769 तक बिंबाजी नागपुर की राजनीति में उलझा रहा, अतः छत्तीसगढ़ का शासन उसके दीवानों के भरोसे चलता रहा। मराठे राजनीति की अपेक्षा शोषण वृत्ति में अधिक पटु थे। नजराना के रूप में पर्याप्त राशि वसूल कर उन्होंने छत्तीसगढ़ के कई जमींदारों को राजा के रूप में मान्यता प्रदान की। बिंबाजी का राज्यकाल राज्य विस्तार के स्थान पर आर्थिक शोषण पर अधिक आधारित था। [105] बिंबाजी भोसंले ने सारंगढ़ के दीवान कल्याण साय को राजा की पदवी प्रदान की। [106]

यह उल्लेखनीय है कि सन् 1740 ई. के पश्चात इस क्षेत्र में मराठों की सत्ता स्थापित हो गई लेकिन उन्होंने शासन व्यवस्था की ओर ध्यान देने के बजाय आर्थिक शोषण और शक्ति का विस्तार करने की नीति को आत्मसात किया। प्रारंभिक तौर पर मराठों ने रघुनाथ सिंह तथा मोहन सिंह को शासक बनाये रखा तत्पश्चात् दीवानों के माध्यम से छत्तीसगढ़ का प्रशासन संचालित करना इस बात की ओर संकेत करती है कि मराठों का उद्देश्य केवल क्षेत्र का

आर्थिक शोषण करना ही था। यही कारण था कि जो जमींदार पूर्व में कलचुरि शासनांतर्गत तथा संबलपुर अठारहगढ़ के करद सामत थे वे मराठों को अधिकाधिक नजराना देकर राजा की पदवी प्राप्त कर रहे थे।

छत्तीसगढ़ क्षेत्र के पूर्वी हिस्से में संबलपुर अठारह गढ़जात क्षेत्र में मराठों का नियंत्रण शिथिल था। इस क्षेत्र में सारंगढ़ रियासत शामिल थी यद्यपि वह मराठों के नियंत्रण में थी तथापि यह नियंत्रण वास्तविक कम और नाममात्र का ही अधिक था।[107] सन् 1766 में नागपुर से कटक जाते समय मराठोंकी सेना संबलपुर पहुंची तो स्थानीय राजा ने चारे तथा धन देने से इंकार कर दिया अतः उन्होंने जबरन नगर में प्रवेश करना चाहा किन्तु उन्हें मार भगाया गया।[108] सन् 1781 में संबलपुर का राजा मराठों के प्रति विद्रोही हो गया तब सारंगढ़ के राजा ने इसमें उनकी मदद की।[109] सन् 1787 में बिंबाजी की मृत्यु पश्चात संबलपुर तथा उसके समीपवर्ती सारंगढ़ आदि राज्य स्वतंत्र हो गये तथा सन् 1800 ई. तक मराठों के नियंत्रण से मुक्त रहे।[110]

बिम्बाजी की निःसंतान मृत्यु उपरांत उसकी पत्नी आनंदीबाई ने उसके भतीजे चिमणाबापू को गोद ले लिया,[111] किन्तु अपनी प्रमुखता रतनपुर में बनाये रखने के लिए उसने चिमणाजी को नागपुर में ही रखा। इसी समय मुधोजी की मृत्यु पश्चात नागपुर राज्य रघुजी द्वितीय के हाथों में आ गया।[112] अगस्त 1789 में चिमणाजी की रहस्यमय स्थिति में मृत्यु हो गई जिसके पीछे कहा जाता है कि रघुजी द्वितीय का हाथ था।[113] यद्यपि चिमणाजी रघुजी का भाई था किन्तु उसे भय था कि कहीं आगे चलकर चिमणाजी नागपुर सिंहासन का दावेदार न बन जाये।[114] चिमणाजी की मृत्यु उपरांत छत्तीसगढ़ राजदेय के रूप में रघुजी के छोटे भाई व्यंकोजी को सौंप दिया गया।[115]

छत्तीसगढ़ के शासन के संबंध में उसने सर्वथा एक नवीन नीति अपनायी। छत्तीसगढ़ की राजधानी रतनपुर में रहकर पहले की तरह प्रत्यक्ष शाम्न करने की बजाय उसने नागपुर से ही यहां का शासन चलाने का निश्चय किया इसका परिणाम यह हुआ कि नागपुर ही छत्तीसगढ़ की राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया।[116] व्यंकोजी ने दो या तीन बार ही छत्तीसगढ़ की आकस्मिक यात्राएं की परन्तु उन्होंने यहां के शासन में व्यक्तिगत रूचि नहीं ली।[117] सच तो यह है कि आनंदी बाई अपने शासन में किसी का हस्तक्षेप पसंद नहीं करती थी और स्वयं छत्तीसगढ़ की एकछत्र शासिका बने रहना चाहती थी। सर रिचर्ड जेनकिन्स के अनुसार - " आनंदी बाई राज्य के सारे खुरापातों की जड़ थी यद्यपि ये खुरापाते अत्यंत मामूली किस्म की रहा करती थी।"[118] ब्यंकोजी ने सूबा महिपतराव को उसकी ओर से शासन चलाने का निर्देश दिया किन्तु आनंदी बाई के अत्यधिक विरोध के कारण यह निर्णय लिया गया कि शासन व्यंकोजी के नाम पर चलाया जायेगा जिसका प्रतिनिधित्व वहां सूबा करेगा किन्तु सूबा आनंदी बाई के समस्त आदेशों को मानने के लिए बाध्य होगा। इस प्रकार छत्तीसगढ़ के अन्य क्षेत्रों में साथ ही सारंगढ़ की भूभाग भी आनंदीबाई के प्रभाव में रहा। वास्तव में आनंदीबाई ने सन 1801 में अपनी मृत्यु तक सम्पूर्ण सत्ता अपने हाथों में रखी।[119]

बिम्बाजी की मृत्यु के बाद से लेकर अंग्रेजों के आगमन तक छत्तीसगढ़ पर एक के बाद एक 6 सूबो ने शासन किया जिन्होंने प्रत्येक विभाग में व्यापक अधिकारों का प्रयोग किया।[120] कोई भी सूबा अपने पद पर भोंसला राजा की इच्छा पर्यन्त ही बना रह सकता था अतः उसके पद में स्थायित्व का अभाव था। इस अनिश्चितता के फलस्वरूप सूबा छत्तीसगढ़ में नैतिक अनैतिक किसी भी ढंग से अधिक से अधिक धन बटोरने की फिक्र में रहता था। लोक कल्याण या राज्य की उन्नति उनका लक्ष्य कभी नहीं रहा।[121] यह शासन प्रणाली सन 1787 से 1818 तक विद्यमान रही।[122]

संक्षेप मे कहा जा सकता है कि समूचे मराठा काल के दौरान मराठा शासन असंयत तथा छत्तीसगढ़ के प्रति उपेक्षापूर्ण रही। मराठों का एकमात्र उद्देश्य इस क्षेत्र से अधिकाधिक धन की वसूली करना। नागपुर में रहकर सूबाओं के माध्यम से छत्तीसगढ़ के भाग्य का फैसला भी अनुचित था स्थानीय जनता तथा जमींदारों का मराठों के प्रति आक्रोश भी कुछ नहीं था यहीं कारण है कि जब तक मराठें शक्तिशाली थे वे उनकी प्रभुसत्ता में रहे , परन्तु जैसे ही उनकी शक्ति कमजोर होने लगी वे अंग्रेजों की ओर आकर्षित होने लगे।

जिस समय छत्तीसगढ़ में मराठों का बर्बरतापूर्ण शासन कायम था उन्हीं दिनों ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी का सत्ता बंगाल, बिहार तथा उरीसा में बड़ी तीव्रता से फैल रही थी शीघ्र ही उसका प्रसार छत्तीसगढ़ में होने लगा। फलस्वरूप छत्तीसगढ़ सहित रियासत पर मराठों की सत्ता और नियंत्रण समाप्त हो गया और यह क्षेत्र ब्रिटिश नियंत्रण एवं प्रभाव के अंर्तगत आ गया।

पाद टिप्पणी

1. डीब्रे, ई.ए. - सेन्ट्रल प्रॉविन्सेज गजेटियर्स छत्तीसगढ़ फ्यूडेटरी स्टेट्स 1909, पृ. 202
2. शील, योगेन्द्रनाथ - मध्यप्रदेश और बरार का इतिहास, 1922, पृ. 305
3. श्रीवास्तव, धानूलाल- अष्टराज्य अम्भोज 1925, पृ. 189
4. रायगढ़ जिला गजेटियर 1979, पृ.2
5. पूर्वोक्त पृ. 377
6. वर्मा, भगवान सिंह -- छत्तीसगढ़ का इतिहास सन् 1991, पृ.1
7. डीब्रे, ई.ए. पूर्वोक्त पृ. 202
8. श्रीवास्तव, धानूलाल पूर्वोक्त पृ. 189
9. शील, योगेन्द्र नाथ - पूर्वोक्त पृ. 305
10. डीब्रे ई.ए. पूर्वोक्त पृ. 160
11. श्रीवास्तव, धानूलाल पूर्वोक्त पृ. 189 एवं रायगढ़ जिला गजेटियर पृ. 377
12. यादव, डोरीलाल - सारंगढ़ रियासत इतिहास के घेरे में लघु शोध प्रबंध गुधाविवि. सन 1983-84 पृ .10
13. पटेल, सुन्दरलाल - सारंगढ़ तहसील में भूमि उपयोग, लघु शोध प्रबंध गुधाविवि. सन 1990, पृ.4
14. रायगढ़ जिला गजेटियर पृ. 7
15. डीब्रे ई.ए. पूर्वोक्त - पृ. 202
16. रायगढ़ जिला गजेटियर , पृ.7
17. पूर्वोक्त पृ. 11
18. कुमार, प्रमीला - मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन पृ. 13-14
19. डीब्रे ई.ए. - पूर्वोक्त पृ. 202- 203
20. यादव, डोरीलाल - पूर्वोक्त पृ. 15
21. एनुअल एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट 1945-46, पृ. 5 (उल्लेखनीय है कि प्रतिवर्ष रियासत के शासक ब्रिटिश सरकार को वार्षिक प्रतिवेदन प्रेषित करते थे)
22. श्रीवास्तव ,धानूलाल पूर्वोक्त पृ. 34
23. रायगढ़ जिला गजेटियर पृ.8
24. पूर्वोक्त पृ. 9
25. श्रीवास्तव, धानूलाल पूर्वोक्त पृ. 168
26. रायगढ़ जिला गजेटियर पृ. 10
27. डीब्रे, ई.ए. पूर्वोक्त पृ. 166

28. रायगढ जिला गजेटियर पृ. 34
29. डीब्रे, ई.ए. पूर्वोक्त पृ. 203
30. पूर्वोक्त पृ. 217
31. पूर्वोक्त पृ. 167-68 एवं 203
32. चार्ल्स ग्राण्ट - दी गजेटियर ऑफ सेन्ट्रल प्रॉविन्सेज ऑफ इंडिया 1870 पृ. 462-63
33. श्रीवास्तव, धानूलाल पूर्वोक्त पृ. 40
34. डीब्रे, ई.ए. पूर्वोक्त पृ. 179
35. पाण्डेय, लोचनप्रसाद- विष्णु यज्ञ स्मारक ग्रंथ पृ. 76
36. रायगढ़ जिला गजेटियर 1979, पृ. 36
37. मेमायर ऑफ आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया क्र. 24 पृ. 9-14 एवं शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ, इतिहास खण्ड, पृ. 6
38. साइन्स एण्ड कल्चर अंक 5, भाग 5, 50269, 70 एवं लक्ष्मीशंकर निगम - दक्षिण कोशल का ऐतिहासिक भूगोल, 1998, पृ. 18
39. जर्नल ऑफ मध्यप्रदेश इतिहास परिषद अंक 15, पृ. 81-84
40. पुरातन अंक 5, पृ. 28-32 एवं रायगढ़ जिला गजेटियर पृ. 36
41. चन्द्रशेखर गुप्त रायगढ़ जिले का पुरातत्व रायगढ़ जिला स्मारिका 1991 पृ. 5-8
42. महाकौशल हिस्टोरिकल सोसायटी पेपर्स जिल्द 1, पृ. 25-33
43. हेनरी बेबरेज (संपादकीय) - मेयायर ऑफ जहांगीर जिल्द 2, पृ. 93
44. बिलासपुर जिला गजेटियर पृ. 38
45. जर्नल ऑफ ऐशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, जिल्द 15, पृ. 200
46. वर्मा , भगवानसिंह - छत्तीसगढ़ का इतिहास 1991, पृ.5
47. रायगढ़ जिला गजेटियर 1979, पृ. 36
48. निगम, लक्ष्मीशंकर - दक्षिण कोशल के प्रारंभिक राजवंश, लघु शोध प्रबंध 1993-94 एवं प्यारेलाल गुप्त प्राचीन छत्तीसगढ़ 1973, पृ. 36
49. रायबहादुर हीरालाल, - मध्यप्रदेश का इतिहास, पृ.3
50. गुप्त, प्यारेलाल- पूर्वोक्त पृ. 34
51. पाण्डेय, लोचनप्रसाद- विष्णु यज्ञ स्मारक ग्रंथ, पृ. 64
52. जैन, बालचन्द्र - उत्कीर्ण लेख भाग 6, सन 1961, परिचय पृ.2
53. एलन- केटलॉफ ऑफ कायंस इन दी ब्रिटिश म्यूजियम
54. रायगढ़ जिला गजेटियर पृ. 37
55. गुप्त, प्यारेलाल- प्राचीन छत्तीसगढ़ 1973, पृ. 49

56. रायगढ़ जिला गजेटियर पृ. 38
57. परिहार, दिनेश नंदनी दक्षिण कोसल का इतिहास 1997 -पृ. 84-85
58. रायगढ़ जिला गजेटियर, पृ. 40
59. हण्टर, डी. डब्ल्यू.- ए हिस्ट्री ऑफ उड़ीसा -पृ.32
60. रायगढ़ जिला गजेटियर पृ. 42
61. मिश्रा, पी.एल. पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ छत्तीसगढ़ पृ. 25
62. रायचौधरी, एच.सी. - डायनेस्टिक हिस्ट्री ऑफ नादर्न इंडिया पृ. 804
63. गुप्त, प्यारेलाल - पूर्वोक्त पृ. 92
64. मिराशी, वासुदेव विष्णु - कलचुरि नरेश और उसका काल सं. 2022, पृ. 38
65. मिराशी, वा.वि. - कार्पस इन्सक्रिप्शंस इंडिकेरम, भाग1, सन 1955 एवं बिलासपुर डिस्ट्रीक्ट गजेटियर प.- 43
66. शर्मा, आर.के. - दी कलचुरिज एण्ड देअर टाइम्स 1980, पृ. 47
67. रायबहादुर हीरालाल- इन्सक्रिप्शंस इन सी.पी. एण्ड बरार 1932, पृ. 107
68. पूर्वोक्त पृ-. 181-82
69. शालेय वार्षिक पत्रिका सारंग 1982-83 शास. हाईस्कूल सारंगढ़ पृ. 11
70. बाबू रेवाराम - तवारिख श्री हैहयवंशी राजाओं की साभार डॉ. रमेन्द्र नाथ मिश्र छत्तीसगढ़ का इतिहास सं. 2037 , पृ. 37
71. चार्ल्स ग्राण्ट गजेटियर ऑफ दी सेन्ट्रल प्रॉविन्सेज ऑफ इंडिया 1870, पृ. 463
72. चरित्र किताब- सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि पृ. 17, 48 (सारंगढ़ के रियासत के शासक संग्राम सिंह द्वारा संकलित करवाया गया प्रमाणिक ग्रंथ
73. शील, योगेन्द्र नाथ - मध्यप्रदेश और बरार का इतिहास 1922,, पृ. 305
74. चार्ल्स ग्राण्ट पूर्वोक्त पृ. 103
75. रायगढ़ जिला गजेटियर , पृ. 44
76. पूर्वोक्त पृ. 44
77. गुप्त, प्यारेलाल- पूर्वोक्त पृ. 103
78. चरित्र किताब सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि पृ. 48
79. प्रसाद, ब्रजकिशोर -अठारहवीं सदी में अठारहगढ़ (शोधपत्र) पृ.1
80. पूर्वोक्त, पृ. 2
81. रायगढ जिला गजेटियर पृ.44
82. मिश्रा, पी.एल.- पूर्वोक्त पृ. 31
83. बिलासपुर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृ. 37
84. गुप्त, प्यारेलाल पूर्वोक्त पृ. 104
85. बिलासपुर सेटलमेन्ट रिपोर्ट 1868, पृ. 30

86. गुप्त, प्यारेलाल - पूर्वोक्त , पृ. 112-113
87. शास्त्री, शिवदत्त - रतनपुर आख्यान
88. बिलासपुर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर. पृ. 49
89. गुप्त, प्यारेलाल पूर्वोक्त पृ. 115 साभार रमेन्द नाथ मिश्र छत्तीसगढ़ का इतिहास संवत 2037
90. डफ, ग्राण्ट - हिस्ट्री ऑफ मराठा भाग 1, 1826, पृ. 116
91. पूर्वोक्त पृ. 116-17 एवं 429
92. पूर्वोक्त खण्ड 1, पृ. 429
93. पूर्वोक्त खण्ड 1, पृ. 117- 118
94. गुप्त, प्यारेलाल पूर्वोक्त पृ. 111
95. मिश्रा, पी.एल. -मराठाकालीन छत्तीसगढ़ 1998, पृ. 24
97. बिलासपुर डिस्ट्रिक्ट गजेटि र पृ. 49
97. मिश्रा, पी.एल. - पूर्वोक्त पृ. 27
98. बिलासपुर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर पृ. 49
99. गुप्त, प्यारेलाल -पूर्वोक्त पृ. 114
100. रिचर्ड जेनकिंस - रिपोर्ट ऑन दी टेरीटरीज ऑफ दी राजा ऑफ नागपुर 1923, पृ. 56
101. चरित्र किताब- सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि पृ.49
102. विल्स सी.यू. ब्रिटिश रिलेशंस विथ दी नागपुर स्टेट इन एटिन्थ सेन्चुरी , 1926, पृ. 147
103. रिचर्ड जेनकिंस पूर्वोक्त पृ. 76
104. गुप्त, प्यारेलाल- पूर्वोक्त पृ. 120
105. पूर्वोक्त पृ. 117- 123
106. चरित्र किताब सारंगढ़ रियासत की पाण्डुलिपि पृ. 8-9
107. विल्स, सी.यू.- पूर्वोक्त पृ. 150
108. पूर्वोक्त पृ. 38
109. शुक्ल, अभिनंदन ग्रंथ, इतिहास खण्ड. पृ. 103
110. विल्स, सी.यू. - पूर्वोक्त पृ. 148-49
111. पूर्वोक्त पृ. 88
112. रिचर्ड जेनकिन्स -पूर्वोक्त, पृ. 61
113. शुक्ल, प्रयागदत्त- मध्यप्रदेश का इतिहास और नागपुर के भोसंले पृ. 140
114. गुप्त, प्यारे लाल- पुर्वोक्त पृ. 124
115. रायगढ जिला गजेटियर पृ. 47
116. एगन्यू, पी. वान्स- ए रिपोर्ट ऑन दी सूबा आर प्रॉविन्सेज ऑफ छत्तीसगढ 1820, पृ. 12
117 पूर्वोक्त पृ. 12
118. रिचर्ड जेनकिन्स, पूर्वोक्त पृ. 135

119. बिलासपुर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर पृ. 49

120. गुप्त, प्यारेलाल- पूर्वोक्त पृ. 126

121. पूर्वोक्त पृ. 126

122. काले, वाय एम. - नागपुर प्रांताचा इतिहास, पृ. 284